SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

mjk¡o tutkfr dk voèkkj.kkRed fo'y"k.k ,o lkekftd xfr'khyrk

fofiu dqekj] शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग
डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
fofiu dqekj] शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग
डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 04/02/2023
Revised on : -----
Accepted on : 20/02/2023
Plagiarism : 00% on 04/02/2023

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
Overall Similarity: **0%**
Date: Feb 4, 2023
Statistics: 5 words Plagiarized / 3216 Total words
Remarks: No similarity found, your document looks healthy.

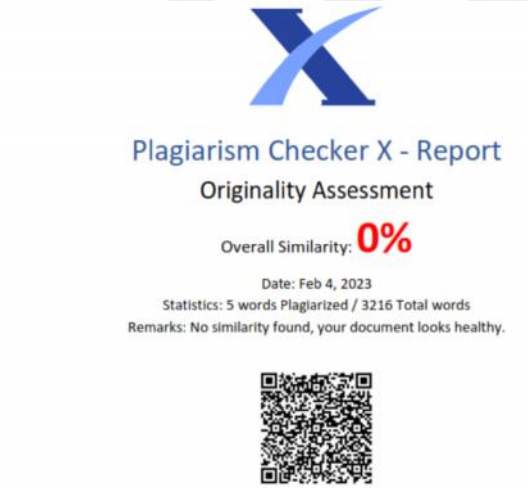

'kks/k lkj

उराँव को जनजाति शब्द के पर्याय के रूप में आदिम जाति, वन्य–जाति, आदिवासी–वनवासी, असाक्षर, निरक्षर, प्रागैतिहासिक, असभ्य जाति आदि नाम दिया जाता रहा है, परन्तु इसमें से अधिकांश एक ही अर्थ को घोषित करने वाले हैं। इन्हें असभ्य, निरक्षर या असाक्षर आदि कहना आज पूर्णतया अनुचित और अव्यवहारिक है। यहाँ हमने जनजाति कहना ही उपयुक्त माना है। उसी समाज से उराँव जनजाति के लोगों की देश की आर्थिक और सामाजिक समृद्धि में हिस्सेदारी बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि भारतीय आबादी के एक बड़े हिस्से, विशेष रूप से उराँव जनजातीय समुदायों को, पिछले कई दशकों में कार्यान्वित विकास परियोजनाओं का पूरा लाभ नहीं मिला है बल्कि इस अवधि के दौरान कार्यान्वित विकास परियोजनाओं का उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इनके मूल निवास को भी तत्कालीन शासक द्वारा विभिन्न समस्याओं की चुनौतियाँ सहन करना पड़ा है। वर्तमान में उराँव जनजाति ने भी अपने आप को समाज की मुख्य धारा से जोड़ते हुए अनेक बड़े शहरों में पलायन कर अपनी आर्थिक तंगी को दूर किया है और सामाजिक व राजनैतिक स्तर पर भी महत्वपूर्ण पदों पर अपना वर्चस्व कायम किया है। उराँव जनजातियों में ये जो प्रतिस्पर्धा विकसित हुई है उससे इनके सर्वांगींण उन्नयन की अपार सम्भावनाओं का जन्म हुआ।

eq[; 'kCn

dM+[k Hkk"kk] mjk¡o] etnjh] tutkfr] lL—fr] mUu;u-

mjk¡o 'kCn dk vfHkçk;

अनेकता में एकता ही भारतीय संस्कृति की पहचान है और उस अनेकता के मूल में निश्चित रूप से

भारत के विभिन्न प्रदेशों में स्थित जनजातियाँ हैं। भारत की जनजातियाँ विभिन्न क्षेत्रों में रहते हुये अपनी संस्कृति के माध्यम से भारतीय संस्कृति को एक विशिष्टता प्रदान करती हैं तथा देश की अन्यान्य संस्कृतियों पर भी अमिट छाप छोड़ती हैं। स्वाभाविक है कि जनजातियाँ अनेक हैं तो उनकी संस्कृति में भी विविधता होगी। अतः इनकी वैविध्यमय संस्कृति ने जिस भारतीय संस्कृति को उभरने में योगदान किया, वह भी विविधता को धारण करने वाली हुई। उन्हीं जनजातियों में एक प्रमुख उराँव जनजाति जो झारखण्ड राज्य की महत्वपूर्ण एवं बहुसंख्यक जनजाति है। जनजातीय जनसंख्या के दृष्टिकोण से भारत में उराँव जनजाति का पांचवा तथा झारखण्ड राज्य में संथाल जनजाति के बाद दूसरा स्थान है। यह मूलतः प्रोटोऑस्ट्रोलायड प्रजाति की जनजाति मानी जाती हैं। उराँव जनजाति के लोग अपनी भाषा में अपने को ''कुड़ुख़'' कहते हैं। कुड़ुख़ द्रविड़ियन शब्द है जिसका अर्थ ''मनुष्य'' है। सामान्यतः उराँव शब्द का अर्थ उराँव जाति के रूप में ही होता रहा है परन्तु ''उराँव'' शब्द उराँव जनसमुदाय की भाषा का नहीं है। उराँव शब्द की उत्पत्ति कैसे हुई इस विषय में विद्वानों ने अलग–अलग विचार व्यक्त किये हैं। उराँव शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अंग्रेज विद्वान डॉ. हॉन की मान्यता है कि उराँव कुडुख़ जाति के गोत्रों में से एक गोत्र है। डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव ने अपनी पुस्तक ''बिहार के उराँव'' में लिखा है कि उराँव के सम्बन्ध में ''यह भी कहा जाता है कि रामायण काल में राम–रावण की लड़ाई में इन्हीं के पूर्वजों ने श्री राम जी का साथ दिया था जिन्हें रामायण में वानर शब्द से संबोधित किया गया है। श्री रामचन्द्र जी ने इसी वानरी सेना की सहायता से लंकाधिपति रावण को पराजित किया। लंका विजय के बाद जब श्री रामचन्द्र जी उत्तर भारत को चले गये और उनका स्वर्गवास हो गया तब शोक संवाद पाने पर वे वानर जाति के लोग ''ओ रामश् ओ राम'' कह कर विलाप करने लगे और इसी विलाप शब्द से उस जाति का नाम ''ओ राम'' पड़ा जो कि बिगड़ कर ''उराँव'' हो गया। कहा यह भी जाता रहा है कि प्राचीनकाल में एक जंगल में एक मुनि तपस्या कर रहे थे। समाधि में वे इतने तल्लीन हो गये थे कि उनके शरीर पर दीमकों ने मिट्टी का ढेर बना दिया था। एक लकड़हारे ने उन्हें लकड़ी समझ कर उन पर कुल्हाड़ी चला दी। मुनि की छाती से खून बह निकला और लकड़हारे ने उसे एक दोने में भर लिया। इसी खून से बाद में एक बालक तथा एक बालिका की उत्पत्ति हुई। ''उर'' (छाती) के खून से उत्पन्न होने के कारण इसकी सन्तान को उर–जन कहा गया, जो बाद में बिगड़ कर उराँव हो गया। उराँव के उपत्ति के सम्बन्ध में ही डॉ. शान्ति ख़लखो ने अपनी पुस्तक ''उराँव'' ''संस्कृतिः परिवर्तन एवं दिशाएँ'' में लिखती हैं कि श्री मंगरा कुजूर जो उरॉव समाज के कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता एवं उरॉव धर्म एवं संस्कृति के गहन चिन्तन करने वाले विद्वान हैं जिन्हांने उराँव शब्द की उत्पत्ति का एक अलग ही तर्क दिया है जो अभी भी उराँव जनजाति में यह प्रथा प्रचलित है। उराँव जाति के मुख्य पर्व सरहुल में सूर्यदेव एवं धरती मां की आराधना की जाती है जिससे संपूर्ण सृष्टि की रचना हुई है। यह पर्व इनके धर्म का मुख्य आधार है कुडुख भाषा में ''रम्फ'' का अर्थ ''सूर्य की किरण'' होता है। सूर्य की किरण (रम्फ) से सृष्टि हुई है। अपनी सृष्टि को समाप्त करने के लिए धर्मेश (भगवान) ने दुनिया में आग लगा दी। जिससे सब कुछ जल कर नष्ट हो गया तथा आग जलकर समाप्त होने पर पाया कि दो बच्चे विनती कर रहे थे। ये प्रक्रिया बाद में भी विपत्ति आने पर चलता रही। यही ''ओ रम्फ'' शब्द बिगड़ कर ''ओ राम'' बना। श्री कुजूर के तर्क को उपर्युक्त माना जा सकता है। इस तरह ''ओ राम'' शब्द का रामायण वाले कथा से कोई सम्बन्ध नहीं माना जा सकता बल्कि ''ओ रम्फ'' से सुनने–बोलने में गलती के कारण ''ओ राम'' और उराँव शब्द का निर्माण हुआ।

mjkok dk ey fuokl

उराँव जनजाति का मूल निवास स्थान मुख्यरूप से छोटानागपुर के राँची, गुमला, लोहरदगा, सिंहभूमि, धनबाद, लातेहार पलामू जिला है। इसके अतिरिक्त ये पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, भागलपुर, नेपाल सीमा और अण्डमान निकोबार द्वीप में भी उराँव जनजाति पायी जाती है। छोटानागपुर, झारखण्ड में उराँव के प्रवेश अथवा बसने के पूर्व के इतिहास का मुख्य स्रोत मिथक, परम्परा आदि से ओत–प्रोत है। उराँव की परम्परा से संकेत मिलता है कि इनका मूल स्थान दक्कन रहा है जिसे कुछ ने ''कोंकण'' बतलाया है। इनकी भाषा द्रविड़ भाषा से मिलती–जुलती है। भाषा किसी जाति को प्रमाणित करने की अनिवार्य शर्त नहीं है, किन्तु संयोग से उराँव भाषा एवं प्रजाति दोनों दृष्टि से द्रविड़ जाति के हैं। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार उराँव मूलतः दक्षिण भारत के

ही निवासी थे क्योंकि कुडुख और कन्नड़ तथा तमिल के अनेक शब्दों में एकरूपता है। भाषा के रूप में कुडुख़ कन्नड़ के सबसे निकट है।[1] इनके मूल निवास स्थान के विशय में जियाउद्दीन अहमद ने अपनी पुस्तक बिहार के आदिवासी में लिखा है कि उराँव छोटा नागपुर के प्राचीन निवास नहीं है। ये लोग पहले दक्षिणी हिन्दुस्तान के पठार में रहा करते थे।[2] डाल्टन, एस.सी. राय और अन्य विद्वानों ने उराँव परम्परा को कोंकण से सम्बन्धित बताया है। हेडन तथा रिजले जैसे विद्धानों ने उराँव को द्रविड़ प्रजाति का बताया है। उराँव जनजातियों के मूल निवास स्थान को लेकर विद्धानों में काफी मतभेद पाया गया लेकिन अधिकतर विद्धानों का मत है कि इनका मुख्य निवास थान कोंकण और डेकन का पठार था। उराँव का आगमन दक्षिण के अन्य भागों से होते हुए सिंधु घाटी, मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा को निवास स्थान के रूप में दर्शाता है। बलूचिस्तान के कुछ भागों में बोली जाने वाली ब्राहुई भाषा इसका निश्चित प्रमाण है। उराँव जनजाति का परिभ्रमण पहले से ही होता रहा है।[3] इस बात का इतिहास गवाह है कि ईसा पूर्व 3,500 वर्ष पहले उरॉव सिंधु नदी तट पर स्थित मोहनजोदड़ो तथा सतलज नदी के तट एवं हड़प्पा के तट पर निवास करते थे। लगभग 1750 वर्ष ईसा पूर्व शक्तिशाली आर्यो के अतिक्रमण के कारण वर्तमान हरियाण तथा युमना नदी के समतल मैदानों को पार करते हुए अमर कंटक पर्वत पर सोन नदी के उद्गम स्थल के क्षेत्र में नंदनगढ़, पिपरीगढ़ या गढ़ पिपरा आदि गांव में रहते थे। उराँव के निवास स्थान एवं स्थानान्तरणा के बारे में ''उराँव लोकगीत एवं लोक कथाएँ'' पुस्तक में लेखकों का कहना है कि ''कुँडख़र'' जिन्हें उरॉव भी कहा जाता है, द्रविड़ परिवार के हैं। एक समय था जब द्रविड़ भारत वर्ष के उत्तर पश्चिम में बलूचिस्तान तक फैले हुए थे। मध्य एशिया की ओर से बढ़ते आर्य द्रविड़ों को सिन्धु घाटी के पार धकेलने लगे तब द्रविड़ दक्षिण पठार की ओर आये।[4] लेकिन कुछ लोग यहाँ–वहाँ छूट गये। अभी भी बलूचिस्तान में छूटे हुए द्रविड़ परिवार के ब्राहुई रह गये हैं।

कुछ उराँव कश्मीर और नेपाल में हिमालय की तराई में छिट–पुट पाये जाते हैं लेकिन अधिकांश उराँव गंगाए जमुना नदियों के तट से होते हुए पटना जिले के निकटवर्ती पर्वतों और रोहतास में आ बसे। भगवतशरण उपाध्याय ने अपनी पुस्तक ''सांस्कृतिक भारत'' में लिखा है कि ''आर्यो के इस देश में आने के बहुत पहले द्रविड़ों ने संस्कृति का अद्भुत विकास किया था और वह संस्कृति नगरों की थी, गांवों की नहीं। दखिनी पंजाब के मंतगुमरी जिले में हड़प्पा और सिन्ध के लरकाना जिले में मोहनजोदड़ो उस नागरिक सभ्यता के नगर थे। उसकी दूसरी बस्तियाँ बलूचिस्तान में भी बसी थी, जिनका सिलसिला उत्तर में बढ़ता हुआ फारस की खाड़ी के दोनों ओर ईरान और ईराक तक चला गया था।[5] वहाँ उसी से मिलती–जुलती एक और सभ्यता फैली हुई थी, जिसे सुमेरी सभ्यता कहते हैं।'' आर्यो ने जब सिन्धु में आक्रमण किये उनका सामना द्रविड़ों से हुआ जिसमें द्रविड़ों की हार हुई जिन्हें अपनी आजादी प्रिय थी। उन्होंने आर्यो कि गुलामी को अस्वीकार किया और उत्तर से दक्षिण के इलाकों में जंगलों और पहाड़ों में चले गये। विद्वानों का मानना है कि उराँव द्रविड़ प्रजाति के हैं और बलूचिस्तान की ओर से सिन्धु घाटी में बसने वाले सिन्धु सभ्यता के निर्माता द्रविड़ थे। आर्यो के आगमन से सिन्धु सभ्यता तहस–नहस हो गई और द्रविड़ उराँव बिखर गये और वे कई भागों में बॅट गये।

mjko tutkfr dk Lo.kZ ;qx

उराँव जाति ने आर्यो की दासता स्वीकार नहीं की और वे दूर जंगल में जा बसे और अपनी भाषा संस्कृति को कायम रखा। उराँव जनजाति का आगमन दक्षिण भारत के अन्य भागों से होते हुए सिंधु घाटी, मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा को निवास स्थान के रूप में दर्शाता है। आर्यो के आक्रमण के बाद उन्होंने पंजाब में सतलज, यमुना और अन्य नदियों के किनारे अपना निवास स्थान बनाया। सभी स्थानों से इनका प्रवर्जन होता रहा है। अन्त में पश्चिमोत्तर भारत से गंगा–यमुना मैदान पार कर ये शाहाबाद और रोहतासगढ़ तक पहुँचे। डॉ. एस.सी. राय के अनुसार उराँव दक्षिण के कोंकण से गुजरात में नर्मदा नदी के तट को पकड़ते हुए पूर्व दिशा की ओर विन्ध्य की पहाड़ियों को पार कर बिहार के शाहाबाद तक पहुँचे। अंततः रोहतास गढ़ में इन्होंने अपना साम्राज्य स्थापित किया। रोहतासगढ़ उराँव जाति के स्वर्ण युग के रूप जाना जाता है जहाँ वे अपने वंशजों के साथ स्वतंत्र रूप से विचरण करते थे।

रोहतासगढ़ किले के बगल से सोन नदी बहती है। अपने ही शासन के अधीन शाहाबाद, आरा, भभुआ और पटना

की समतल और उपजाऊ भूमि में उराँव खेती–बारी करते थे। उराँव शुरू से ही एक अच्छे और कुशल कृषक थे। उराँव रोहतासगढ़ के कुशल शासक और स्वयं में आत्मनिर्भर और स्वावलम्बी थे। गांव में कृषि कार्य के लिए फाल, कुदाली, गंईता, खुरपी, टांगी, बसुला, हॅसुआ, छुरी, तीर और लोहे के औजारों को बनाने के लिए अपने साथ लोहारों को रखते थे। कपड़े बुनने के लिए चीक बड़ाईक, गाय–बैलों को चराने के लिए अहीर, घड़ा बनाने के लिए कुम्हार, शादी ब्याह में ढोल, नगाड़ा और अन्य बाजाओं को बजाने के लिए गोड़ाईत, सूप, बढ़नी, कुमनी तथा कंघी बनाने के लिए महली और तूरी लोगों को अपने साथ बसाया और वे स्वयं खेतीहर थे। इन सभी सेवा करने वालों को उराँव किसान फसलों को मिलते समय साल में पूर्व निर्धारित अनाज देते थे। इस प्रकार हर एक गांव आत्मनिर्भर था। वर्तमान में सभी छोटानागपुर झारखण्ड में उराँव के साथ ही गांव में निवास करते हैं।[6] रोहतासगढ़ पर दुश्मनों के आक्रमण से हार खाने के बाद उराँव को रोहतासगढ़ का किला छोड़ना पड़ा और यहाँ से वे भागते हुए छोटानागपुर के जंगलों में छिप गये। रोहतासगढ़ और सिन्धु घाटी के पतन की लोक–कथा आज भी उराँवों द्वारा लोक गीतों में गाया जाता है। उराँव समुदाय के बीच शिकार खेलने की प्रथा अब भी कायम है। शिकार में बूढ़ों और बीमार लोगों को छोड़कर सभी पुरूष जंगलों में पन्द्रह–बीस या एक माह तक के लिए जाते थे। पुरूषों की अनुपस्थिति में दुश्मनों ने किले पर चढ़ाई कर दिए उराँव औरतों ने पुरूषों का वेश धारण कर तीन बार तक लड़ाई जीती जिससे विजय–प्रतीक के रूप में उराँव राजा (प्रधान) उनके कपाल (माथे) पर तीन लकीरों का चिन्ह दिया था, जिन्हें अब भी ग्रामीण औरतों के कपाल (माथे) पर देखा जा सकता है। आज भी प्रत्येक बारह वर्ष में औरतों द्वारा खेला जाने वाला ''जनी शिकार'' इसी विजय का प्रतिरूप है। एक ग्वालिन के द्वारा गुप्त रहस्य के भण्डाफोड़ के कारण दुश्मनों ने पुनः चढ़ाई कर रोहतासगढ़ को जीत लिया। रोहतास से विस्थापित होने पर उराँव दो दलों में बट गए। एक शाखा जिसे ''माले'' कहा गयाए राजमहल में जा बसी, दूसरी शाखा सोन पार कर उत्तरी कोयल नदी के ऊपर से पलामू होते हुए छोटानागपुर में प्रवेश कर गयी। छोटानागपुर में प्रवेश के बाद उराँवों ने मुण्डाओं से सम्पर्क किये जो पहले से ही यहाँ निवास करते थे। मुण्डाओं ने उराँवों को शरण दिया। छोटानागपुर में प्रवेश करने के पूर्व ही उराँव स्थायी उन्नत कृषि पद्धति एवं सामाजिक व्यवस्था लेकर यहाँ आये थे। जहाँ इन्होंने जंगलों को काटकर खेती योग भूमि बनाई। उराँव राँची जिले की उपजाऊ भूमि के कुड, लोहरदगा, मंडरा, मांडर, रातू, बेड़ो तथा राँची के पश्चिम हिस्से और सिसई के क्षेत्रों में फैल गये। कुछ उराँव कुडू और चँदवा क्षेत्र से लोहरदगा, गुमला, चैनपुर, महुवाडांड, डुमरी होते हुए मध्यप्रदेश के जशपुर, सुरगुजा, अम्बिकापुर, रायगढ़ और बिलासपुर के भू–भागों में बस गये। कुछ जनसंख्या सिमडेगा होते हुये उड़ीसा के राउरकेला, सुन्दरगढ़, सम्भलपुर और झारसुगड़ा के क्षेत्रों में फैल गये।[7]

mjko tutkfr% dk;l ,oa foLFkkiu

भारत में जब अंग्रेजों का आगमन हुआ तब ब्रिटिश काल के शासकों मुख्य उद्देश्य व्यापार करना था परन्तु वे अपनी कुटनीतिक हल से धीरे–धीरे भारत के शासक बन बैठे। अंग्रेजों द्वारा बिहार के बगहा, बेतिया और फारविशगंज में नील की खेती की शुरूआत की गयी और खेतों में मजदूरी करने के लिए उराँव को झारखण्ड के छोटा नागपुर से ले गये। उराँव जाति के लोग काफी समय यहाँ मजदूरी किये और यही के क्षेत्रों में बस गये। यहीं से उराँव नेपाल की तराई, विराटनगर और दरान की ओर भी बढ़ते चले गये। पुर्णिया और कटिहार में चावल मिले थे इसलिए इन क्षेत्रों में भी इनकी संख्या काफी रही है। अंग्रेजों में बाद में चाय की खेती भी शुरू की और उराँव जनजाति के कर्मठ, मेहनती ईमानदार तथा मिलजुल कर काम करने के कारण इसमें भी मजदूरी के लिए संलिप्त कर लिया इसलिए अंग्रेजों ने बंगाल के सिलीगुड़ी, जलपाईगुड़ी, हसिमारा, बीचबगान और आसाम, भूटान के चाय बगानों में भी उराँवों को काम करने के लिए ले गये और उराँव इन्हीं क्षेत्रां में उनका निवास हो गया। काम के सिलसिले में उराँवों को अंडमान–निकोबार भी भेजा गया और कुछ उराँवअंडमान–निकोबार में भी रह गये। जब ईसाई मिशनरी धर्म प्रचार के लिए छोटानागपुर के उराँव क्षेत्रों में आये तब इन्होंने कुछ उराँवों को ईसाई बनाकर धर्म प्रचार के लिए विभिन्न जगहों में अपने क्षेत्र से बाहर ले गये और उराँव जहाँ गये वहीं बस गये।[8] आज उराँव की संख्या विदेशों में भी देखी जा सकती है।

झारखण्ड में कल–कारखानों के खुलने से उराँव की जमीन सरकार द्वारा अधिग्रहण कर ली गई है। ये विस्थापित होकर चतरा और हजारीबाग क्षेत्रों में बस गये हैं। अब फिर कल कारखानों को स्थापित करने की बात चल रही हैए इन्हें फिर से विस्थापित होकर छोटानागपुर से बाहर बसने के लिए विवश होना होगा। 15 नवम्बर 2000 में बिहार से झारखण्ड के अलग हो जाने से बाहरी लोग राँची और इसके ईर्द–गिर्द, धड़ल्ले से बसते जा रहे हैं। ये लोग नाजायज तरीकों से कानून के विरूद्ध यहां के आदिवासियों की जमीनों पर दखल–कब्जा कर मकान बना रहे हैं। उराँव और अन्य जनजाति जो शान्तिप्रिय हैं अन्य क्षेत्रों से आये गैर आदिवासियों के सामने टिक नहीं पा रहे हैं।[9] राँची क्षेत्रों में निवास करने वाले उराँव और अन्य जनजाति लाचार होकर शहर से दूर भाग रहे हैं या गरीब होकर मजदूरी कर रहे हैं। छोटानागपुर के राँची शहर तथा उसके आस–पास के जिला से इनकी संख्या कम होती जा रही है। बाहरी लोगों का ही बोल–बाला और दबदबा बढ़ता जा रहा है। अब इन क्षेत्रों के आस पास रहने वाले उराँव एवं अन्य जनजातियों के हाथों से जमीन निकलती जा रही हैं। बाहरी लोगों द्वारा हेर–फेर से इनकी जमीने बहुत ही कम दामों से ली जा रही है। उराँव जनजाति खेती या मजदूरी करने के अलावा दूसरा काम या व्यवसाय करना नहीं जानते हैं। अपनी जमीनों से बेदखल होने पर अब उराँव दिनों दिन गरीब होते जा रहे हैं। उराँव जनजाति को शिक्षित होकर कृषि के साथ–साथ अन्य व्यवसाय में बढ़ना चाहिये और अन्य लोगों के साथ मुख्यधारा में शामिल होना होगा अन्यथा इन्हें इस प्यारी भूमि छोटानागपुर से भी हाथ धोना पड़ेगा और पूर्व की तरह फिर दर–दर भटकना पड़ेगा। अगर स्थिति ऐसे ही रही तो उराँवों की सांस्कृतिक, पहचान और एकजुटता नष्ट हो जायेगी अर्थात् उराँवों का अस्तित्व ही संकटमय हो सकता है।[10]

'kkfUrfç; mjko tutkfr dk lkekftd nkgu

स्वानीधोत्तर भारत में जनजातियों में आरक्षण का प्रावधान सुनिश्चित किया गया। इन्हें बड़े–बड़े शहरों में नौकरियाँ मिली और कुछ लोग जहाँ नौकरियाँ मिली वहीं बस गये। इनकी आबादी भारत के बड़े–बड़े शहरों मुम्बई, दिल्ली, बैंगलुरू, पुणे, कलकत्ता, वाराणसी, लखनऊ, पटना, आदि शहरों में जा बसे और वहाँ कार्य करने लगे। उराँव में पुरूष और महिला दोनों बहुत ही ईमानदार और कर्मठ मजदूर होते हैं।[11] वर्तमान समय में दलालों द्वारा धन के लालच में शान्तिप्रिय भोली–भाली मेहनती और ईमानदारी के कारण छोटानागपुर की उराँव लड़कियों को ज्यादातर दिल्ली, मुम्बई, कलकत्ता, पुणे, बैंगलुरू में नौकरी करने के बहाने बहला–फुसला कर ले जाते हैं और जात–परजात लोगों को बेच दे रहे हैं और जहाँ उन्हें नौकरानियों के रूप में काम करने के लिए विवश कर दिया जा रहा है। वर्तमान समय में दिल्ली में उराँवों की जनसंख्या काफी ज्यादा है। कम से कम पैसों में मजदूरी करने लिए विवश उराँव जनजाति की लड़कियों का शोशण इस समय बहुत ज्यादा बढ़ गया है जिसके कारण घर से दूर गये बच्चों से मिलने के लिए भी परिवार को वंचित रहना पड़ता है। बड़े धन समृद्ध लोग अपने पैसे और पावर के बल पर नौकरी कर रही उराँव लड़कियों को कम वेतन देते है और 3 से 4 वर्षों में एक बार 5–10 दिनों की छुट्टी देते हैं घर जाने के लिए। फिर भी मजबूरी और पैसों से लाचारी के कारण इन लड़कियों को बड़ें शहरों में मजदूरी/नौकरी के लिए जाना पड़ता है और ये घरेलू कामगार के रूप में बहुत ज्यादा संख्या में नौकरी कर रहे हैं, जिससे इनके परिवार की आर्थिक स्थिति और आवश्यकताओं की पूर्ति में कुछ सहयोग मिल जाता है।

fu"d"k

समाज में जीवन–यापन और परिवारों के पोषण के लिए उराँव की महिला और पुरूष वर्ग का मुख्य कार्य कृषि है। कुशल कृषक के साथ ही अच्छे और ईमानदारी से मजदूरी करने वाले उराँवों को ईट–भट्टा, बड़े–बड़े कल कारखानों और धनवान लोगों के घर में घरेलू कामकाज से अपने जीवन को सुमग बनाये रखना इनका मुख्य कार्य है। परन्तु आज के वर्तमान परिदृश्य में यह देखा जा सकता है कि जो उराँव जनजाति के लोग समृद्ध हो चुके हैं, वे अपना खुद का व्यापार कर रहे है और दूसरों को नौकरी भी दे रहे हैं। उराँव जनजाति के प्रमुख लोग जो राजनीतिक स्तर पर भी काफी आगे बढ़ रहे हैं और अपने समाज तथा लोगों के उत्थान के लिए निरंतर सक्रिय भागीदारी कर रहे हैं।

lUnHk lph

1. कुजूर मिखाएल, *उराँव संस्कृति,* पृ. 01, 03–04।
2. अहमद जियादुद्दीन, (1978) *बिहार के आदिवासी,* मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।
3. ख़लखो शान्ति, (2009) *उराँव संस्कृतिः परिवर्तन एवं दिशा,* कुडुख विकास समिति राँची, पृ 1–3।
4. ख़लखो शान्ति, (2009) *उराँव संस्कृतिः परिवर्तन एवं दिशा,* कुडुख विकास समिति राँची, पृ 11–12।
5. *सिनगी दाई* त्रैमासिक पत्रिका, लेख महली लिवंस तिर्की–कुड़खर गही पुरखर–भूमध्य सागरीय क्षेत्र, हड़प्पा अरा रोहतासगढ़ गूटी (7000 ई0पू0.8000 ई0पू0) पृ 14।
6. *आदिवासी सत्ता* मासिक पत्रिका, छत्तीसगढ़ की एक विकासशील जनजाति 'उराँव', अक्टूबर–नवंबर 2008, पृ 33।
7. दुबे श्यामाचरण, *आदिवासी भारत,* राजकमल, प्रकाशन दिल्ली, पृ 3।
8. राय एस.सी., *द ओरॉव ऑफ छोटानागपुर,* पृ 10।
9. उराँव प्रकाश चन्द्र (1988) *बिहार के उराँव,* आनन्द ज्ञान प्रकाशन, महावीर चौक, राँची, पृ 01।
10. शर्मा बिमला चरण एवं किर्ती विक्रम, *झारखण्ड की जनजातियां,* पृ 365।
11. *एजरआ* मासिक पत्रिका, (2002) लेख फा. पेत्रुस केरकेट्टा, ''कुँडुख़ जाति कहाँ थी और कहाँ जा रही है, पृ 01।
12. https://hi.vikaspedia.in/education/
13. https://www.jharkhand.gov.in/
14. https://gumla.nic.in/hi/

****